संस्कृत साहित्य सौरभ
उत्तर रामचरित

संस्कृत-साहित्य-सौरभ

२

भवभूति-कृत

उत्तररामचरित

श्री हरदयालुसिंह
द्वारा
कथा-सार

विष्णु प्रभाकर
द्वारा
सम्पादित

सत्साहित्य-प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय,
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली
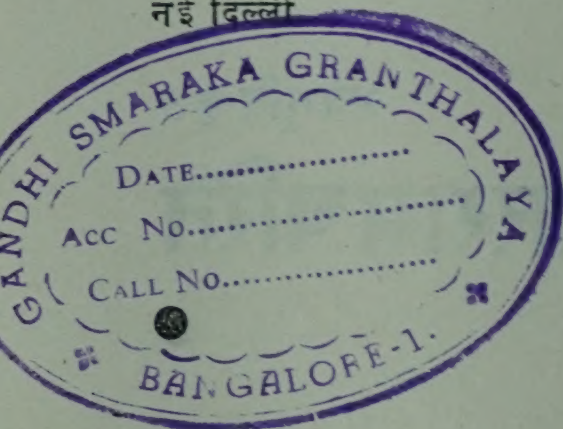
तीसरी बार : १९५६
मूल्य
छः आना
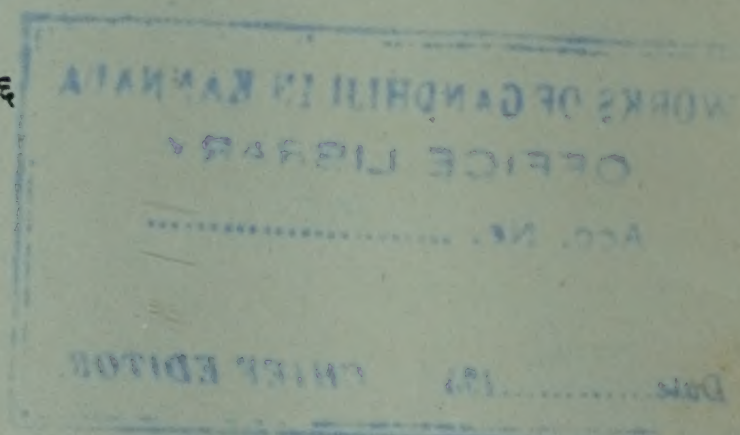
मुद्रक
हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस,
दिल्ली
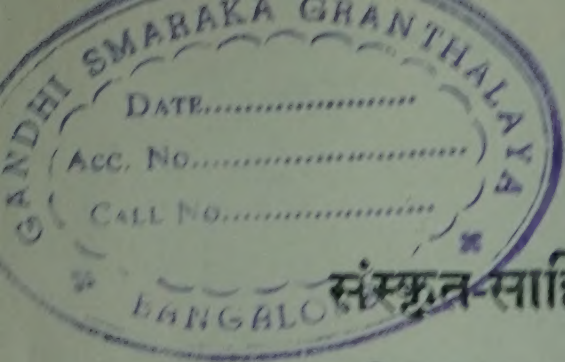
संस्कृत-साहित्य-सौरभ

हमारा संस्कृत-साहित्य अत्यन्त समृद्ध है। भारतीय जीवन का शायद ही कोई ऐसा अंग हो जिसके संबंध में मूल्यवान सामग्री का अनन्त भंडार संस्कृत-साहित्य में उपलब्ध न हो। लेकिन खेद की बात है कि संस्कृत से अपरिचित होने के कारण हिन्दी के अधिकांश पाठक उससे अनभिज्ञ हैं। उनमें जिज्ञासा है कि वे उस साहित्य से परिचय प्राप्त करें; परन्तु उसका रस वे हिन्दी के द्वारा लेना चाहते हैं।

पाठकों की इसी जिज्ञासा को देखकर संस्कृत के महाकवियों, नाटककारों आदि की प्रमुख रचनाओं को छोटी-छोटी कथाओं के रूप में हम हिन्दी में प्रस्तुत कर रहे हैं।

पुस्तकों की भाषा बहुत सरल बनाने का प्रयत्न किया गया है। पाठकों की सुविधा के लिए टाइप भी मोटा लगाया गया है।

इन पुस्तकों का सम्पादन हिन्दी के सुलेखक श्री विष्णु प्रभाकर ने बड़े परिश्रम से किया है।

इस माला में कई पुस्तकें निकल चुकी हैं और आगे निकल रही हैं। आशा है, हिन्दी के पाठकों को इन पुस्तकों से संस्कृत-साहित्य की महान रचनाओं की कुछ-न-कुछ झांकी अवश्य मिल जायगी। पूरा रसास्वादन तो मूल ग्रंथ पढ़कर ही हो सकेगा। यदि इन पुस्तकों के अध्ययन से मूल पुस्तकें पढ़ने की प्रेरणा हुई तो हम अपने परिश्रम को सफल समझेंगे।

तीसरा संस्करण

इस माला की पुस्तकें बहुत ही लोकप्रिय हो रही हैं और हमें हर्ष है कि कुछ पुस्तकों का चन्द महीनों में तीसरा संस्करण प्रकाशित हो रहा है। आशा है कि भारतीय संस्कृति और साहित्य के प्रेमी पाठक इन पुस्तकों को और भी चाव से अपनावेंगे।

—मंत्री

भूमिका

"उत्तरे रामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते" वाली लोकोक्ति 'उत्तर-रामचरित' के संबंध में बिलकुल सत्य प्रतीत होती है। साहित्य के आलोचकों का अनुमान है कि इस रचना में भवभूति कालिदास से भी आगे बढ़ गए हैं। इस नाटक में उन्होंने करुण रस का स्रोत बहाया है। विद्वानों का यह भी कहना है कि करुण रस के वर्णन में भवभूति संस्कृत के सब कवियों से आगे बढ़े हुए हैं। इसी नाटक में भवभूति ने स्वयं अपने लिए कहा है कि उनके संकेत पर सरस्वती उनकी जिह्वा पर नाचने लगती थी। "वचन के बस जासु सरस्वती, करति काज मनो निज भामिनी।" (प्रस्ता०, श्लोक २)। कुछ लोग इसे आत्मश्लाघा कहकर निन्दा कर सकते हैं, पर उन्होंने जो कुछ कहा है, सत्य ही कहा है।

करुण रस के अलावा शृंगार और वीर रस के वर्णन में भी कवि ने लोकोत्तर कुशलता प्राप्त की। वीर रस की दृष्टि से युद्ध-वर्णन वाला प्रसंग अद्वितीय है।

भवभूति का जन्म दक्षिण में विदर्भ देश के अन्तर्गत पद्मपुर नामक ग्राम में हुआ था। इनके दादा का नाम भट्ट गोपाल, पिता का नाम नीलकंठ, माता का नाम जातुकर्णी और स्वयं इनका उपनाम 'श्रीकंठ' था। इनके पूर्वज कश्यप गोत्रीय यजुर्वेद की तैत्तरीय शाखा के पंडित थे। इस नाटक का कथानक भवभूति ने उत्तर रामायण से लिया है।

भवभूति कब और किस समय हुए, यह जानना बहुत कठिन है, परन्तु अनुमान से पंडित लोगों ने इनका समय सातवीं-आठवीं शताब्दी के आस-पास का माना है।

इन्हीं के प्रसिद्ध नाटक 'उत्तररामचरित' का कथानक प्रस्तुत पुस्तक में उपस्थित किया जा रहा है।

—संपादक
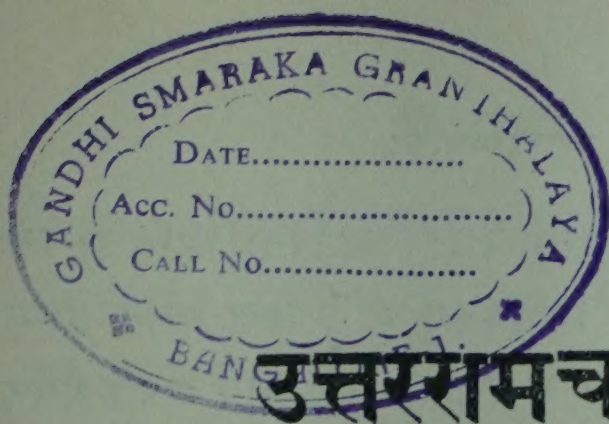
उत्तररामचरित

: १ :

सरयू नदी के किनारे अयोध्या नाम का एक प्रसिद्ध नगर है। यहां अनादि काल से सूर्यवंशी राजा राज्य करते आए हैं। सुप्रसिद्ध राजा रामचन्द्र भी इसी वंश में हुए थे। विधि की विडम्बना के कारण उन्हें राज्य छोड़कर चौदह वर्ष तक वन में रहना पड़ा था। उनकी पत्नी सीता और छोटे भाई लक्ष्मण भी उनके साथ थे। उनकी सौतेली मां कैकेयी अपने पुत्र भरत को राजगद्दी पर बैठाना चाहती थी। इसीलिए उसने राम को वन भिजवाने का षड्यंत्र रचा था। लेकिन भरत इस षड्-यंत्र में शामिल नहीं थे। वह राम को बहुत प्यार करते थे। वह उन्हें लौटाने वन भी गए थे, पर राम नहीं लौटे। भरत उनके नाम पर राज करते रहे और चौदह वर्ष बाद जब राम लौटे तो उन्होंने बड़े प्यार और आदर के साथ उनका स्वागत किया और उनके लिए राज्य छोड़ दिया।

राम के राजगद्दी पर बैठने के अवसर पर एक बहुत बड़ा उत्सव मनाया गया। देश के बड़े-बड़े राजा

उसमें शामिल हुए। इनमें सीता के पिता मिथिला के राजा जनक का नाम विशेषरूप से उल्लेख करने योग्य है। कुछ दिन अयोध्या में रहकर सब लोग अपने-अपने राज्यों को लौट गए, पर जब महाराज जनक मिथिला जाने लगे तो देवी सीता बड़ी उदास हुईं। पिता का स्नेह ऐसा ही होता है। वह चले गए तो सीता और भी उदास रहने लगीं। एक दिन वह इसी प्रकार अन्तःपुर में उदास बैठी थीं कि राम वहां आ गए और उनका मन बहलाने लगे।

उन्हें आए अभी थोड़ी ही देर हुई थी कि शृंगी ऋषि के आश्रम से भगवान् वशिष्ठ का सन्देश लेकर अष्टावक्र आगए। उन्होंने कहला भेजा था कि हम लोग तो जामाता के यज्ञ में लगे हुए हैं। तुम अभी नए-नए राजा हुए हो। तुम्हारे ऊपर राज्य-संचालन का भार आ पड़ा है। उसको सफलतापूर्वक पूरा करने के लिए तुम्हें सूत्र रूप से इतना बतलाये देते हैं कि प्रजा की प्रसन्नता को ही तुम अपना परम धर्म और प्रधान कर्त्तव्य समझना। तुम्हारे पुरखा भी इसी प्रकार प्राप्त किए गए यश को अपना परम धर्म मानते थे।

इसके उत्तर में रामचन्द्र ने कहला भेजा कि जिस प्रकार माला सिर पर धारण की जाती है उसी प्रकार आपकी आज्ञा को मैं धारण करूंगा। मैं विश्वास

दिलाता हूं कि यदि उसके पालन में मुझे स्नेह, दया, सौख्य और यहांतक कि सीता को भी छोड़ना पड़े तो मुझे कष्ट न होगा।

राम को इस प्रकार कर्त्तव्य के प्रति जागरूक देखकर अष्टावक्र मुनि को परम सन्तोष हुआ और वह विदा लेकर विश्राम करने चले गए।

: २ :

कुछ देर बाद लक्ष्मण आए और निवेदन किया कि अवरोध-गृह की दीवारों पर कलापटु चित्रकारों ने महाराज के जीवन की विशेष-विशेष घटनाओं के आधार पर अनेक चित्र बनाये हैं। कृपा कर महाराज उन्हें देखने चलें। यह सुनकर राम ने सीता से भी साथ चलने का आग्रह किया और वे सब चित्र देखने चले।

ये चित्र रामचन्द्र के विवाह से लेकर सीता की अग्नि-परीक्षा तक की घटनाओं से सम्बन्ध रखते थे। राम और सीता बड़े ध्यान से उन्हें देखने लगे। लक्ष्मण उन घटनाओं का परिचय दे रहे थे। चित्र देखते-देखते जब बहुत देर हो गई तो सीता कुछ थकी हुई जान पड़ीं। उन दिनों वह गर्भवती थीं। प्रसव-काल निकट आगया था। इसलिए चित्र देखना छोड़कर वे सब विश्राम करने लगे। तभी देवी सीता के हृदय में यह विचार उत्पन्न हुआ कि यदि इस समय महाराज उन्हें सुरम्य वनों में

विचरने तथा पवित्र भागीरथी में स्नान करने की आज्ञा दें तो उनकी बड़ी कृपा हो। बड़े संकोच के साथ उन्होंने महाराज राम से यह बात कही।

इस बात को सुनकर राम को बड़ा आनन्द हुआ। उन्हें गुरुजनों ने यह आदेश दे रखा था कि सीता की प्रत्येक दोहद इच्छा तुरन्त पूरी की जाय। इसलिए उन्होंने लक्ष्मण को आदेश दिया कि शान्त गति से चलनेवाले रथ में बिठलाकर वह देवी सीता को गंगा-स्नान करा लावें।

लक्ष्मण रथ लेने चले गए तो राम और सीता विश्राम करने के लिए लेट गए। सीता बहुत थक गईं थीं। इसलिए वह पति की बांह पर सिर रखकर सो गईं। उन्हें इस प्रकार सोते देखकर राम के मन में तरह-तरह के विचार आने लगे। तभी सहसा 'हा स्वामी, आप कहां हैं ?' कहकर सीता नींद में बड़बड़ा उठीं। राम उनको ढाढस बंधा ही रहे थे कि इतने में दुर्मुख नाम का गुप्तचर वहां आ पहुंचा। वह राजा की आज्ञा से प्रजा के मन की टोह लेता रहता था और यथासमय उसकी सूचना उन्हें दिया करता था। सदा की भांति राम ने उससे प्रजा की कुशल-क्षेम पूछी। बहुत संकोच के साथ उसने कहा, "यों तो आपके शासनकाल में प्रजा पूरी तरह संतुष्ट है, इतनी कि आपके पुरखा राजा दिलीप आदि को भी

भूल गई है। परन्तु इसके साथ ही मैंने एक बड़ी अरुचि-कर बात सुनी है। उसे कहते हुए मुझे लज्जा आती है। नहीं कहता हूँ तो अपने कर्त्तव्य से विमुख होता हूँ।"

राम बोले, "इसमें लज्जा की कोई बात नहीं है। तुम गुप्तचर हो और गुप्तचर राजाओं के नेत्र होते हैं। इसलिए तुम निडर होकर जो कुछ सुन आए हो सो कह डालो। इसमें तुमको किसी प्रकार का संकोच नहीं करना चाहिए।"

महाराज का आश्वासन पाकर दुर्मुख कहने लगा, "महाराज, हमारी महारानी बहुत दिनों तक रावण के यहां रही थीं, इस बात को लेकर प्रजा के कुछ लोग अपवाद फैला रहे हैं।" यह सुनकर महाराज सन्न रह गए। सीता यज्ञ की पुत्री है, उसके संबंध में यह लोकापवाद! उन्हें बड़ा दुःख हुआ। वह अचेत-से हो गए, परन्तु इससे बचने के लिए उनके पास कोई रास्ता ही नहीं था। अभी-अभी उन्होंने गुरु वशिष्ठ के सन्देश के उत्तर में अष्टावक्र के द्वारा निवेदन किया था कि प्रजा की प्रसन्नता के लिए वह देवी सीता तक का भी त्याग करने को तैयार हैं।

अपने किये हुए इस प्रण को महाराज कैसे टाल सकते थे? इसलिए वह तुरन्त संभल गए और हृदय को कठोर करके उन्होंने लक्ष्मण से कहा, "गंगा-स्नान के

बहाने इन्हें ब्रह्मावर्त ले जाओ। वहां आदिकवि महर्षि वाल्मीकि का आश्रम है। इन्हें वहीं छोड़ आओ।" यह कहते हुए उनकी आंखें भर आईं, लेकिन सीता के सिर के नीचे से अपनी बांह निकालकर वह वहां से चले गए। सीता एक बार फिर 'हा स्वामी' कहकर नींद में बड़बड़ाईं और उनकी नींद टूट गई। इतने में दुर्मुख रथ लेकर आ गया और लक्ष्मण उन्हें लेकर वाल्मीकि के आश्रम की ओर चल पड़े।

लक्ष्मण ने अभी पीठ फेरी ही थी कि महाराज राम को एक और भयानक समाचार मिला। मालूम हुआ कि जमुना के किनारे मथुरा मंडल में जो मुनि लोग तप करते हैं उनपर लवणासुर घोर अत्याचार कर रहा है। यह सुनकर उन्हें बड़ा क्रोध आया। उन्होंने उसी समय शत्रुघ्न को बुलाया और मथुरा जाकर लवणासुर को पराजित करने की आज्ञा दी।

: ३ :

फिर बारह वर्ष बीत गए। राम अयोध्या में राज्य करते रहे और सीता उनके वियोग में तपोवन में दिन दिन काटती रहीं।

एक दिन महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में रहने-वाली तापसी आत्रेयी अगस्त्य आश्रम की ओर जा रही थी। अचानक वनदेवी से उनकी भेंट हो गई। वनदेवी

ने आत्रेयी का उचित सत्कार करके उनके वहां आने का कारण पूछा। वह कहने लगीं कि अब महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में पठन-पाठन में बाधा पड़ने लगी है। न जाने कहां से दो प्रतिभाशाली बालक वहां आ गये हैं। उन्हें देखकर मनुष्य तो क्या, सभी जीवों का हृदय स्नेह से उमड़ उठता है। उनकी बुद्धि बड़ी तेज है। उन्हें जृम्भकास्त्र भी सिद्ध है। मेरा अनुमान है कि वे किसी क्षत्रिय वंश के हैं, क्योंकि महर्षि वाल्मीकि ने उनको वैसी ही शिक्षा दी है। वनदेवी ने पूछा, "क्या आप उनके नाम जानती हैं?" आत्रेयी बोली, "हां, देवता ने उनका नाम लव-कुश बताया था।" यह सुनकर वनदेवी को बड़ा कौतूहल हुआ, परन्तु वह इस संबंध में अपना कोई मत न बना सकी। उसने फिर पूछा कि विघ्न का कारण क्या वे ही हैं? इसपर आत्रेयी ने बताया कि एक बार महर्षि तमसा नदी पर गए थे। वहां उन्होंने क्रौंच युगल में से एक को व्याध के तीर से बिंध जाते देखा। तब अचानक उनके मुंह से अनुष्टुप् छंद निकला। वह वेद से भिन्न था। ब्रह्मा ने ऋषि को उसी छंद में रामचरित कहने की आज्ञा दी। इसपर उन्होंने रामायण की रचना की है।

ये सब बातें बताकर आत्रेयी ने अगस्त्य आश्रम का मार्ग पूछा। तब वनदेवी ने कहा, "आप गोदावरी के

किनारे-किनारे प्रस्रवण पर्वत तक चली जायं। उसी की सुन्दर तलहटी में पंचवटी है। वहीं तुम्हें अगस्त्य मुनि के दर्शन होंगे।"

जब आत्रेयी ने वनदेवी से पंचवटी और गोदावरी का नाम सुना तो उसे सहसा सीताजी की याद आगई, क्योंकि इन स्थानों से उनका गहरा संबंध था। वैदेही के दुःख से दुखी होकर उसने दीर्घ निःश्वास छोड़ा। आत्रेयी को इस प्रकार दुखी होते देखकर वनदेवी ने अनुमान लगाया कि शायद सीता पर फिर कोई आपत्ति आ गई है। इसलिए उसने आत्रेयी से पूछा, "इस प्रकार दुखी क्यों हो रही हो ? क्या देवी सीता पर कोई और विपदा आ पड़ी है ?"

आत्रेयी के नेत्रों से आँसुओं की अविरल धारा बहने लगी। उनका गला रुंध गया वह सहसा अपने दिल की बात नहीं कह सकी। कुछ देर बाद उसने बड़ी कठिनाई से उस दारुण अत्याचार का वर्णन किया, जो अग्नि-परीक्षा में उत्तीर्ण हो जानेपर भी, प्रजानुरंजन के नाम से, सीताजी पर किया गया था। सीता के निर्वासन की बात सुनकर वनदेवी मूर्च्छित हो गई। चेत होने पर उसने आगे की बात पूछी। आत्रेयी ने बताया कि इस समय कोशल-नरेश राम एक अश्वमेध-यज्ञ कर रहे हैं। यज्ञ का घोड़ा छोड़ दिया गया है और उसकी रक्षा के

लिए रघुकुल की सेना उसके साथ है। उसके नेता लक्ष्मण के पुत्र महाधनुर्धारी कुमार चन्द्रकेतु हैं।

अश्वमेध-यज्ञ का समाचार सुनकर वनदेवी सहसा विचलित हो उठी। उसने सोचा कि निश्चय ही महाराज ने अपना दूसरा विवाह कर लिया है, क्योंकि विना पत्नी के यज्ञ की दीक्षा नहीं ली जा सकती। उसने आत्रेयी से फिर पूछा, "क्या राम ने विवाह भी कर लिया ?" आत्रेयी ने उत्तर दिया, "एकपत्नीव्रत होने के कारण वह विवाह कैसे कर सकते थे ? परन्तु यज्ञ करना भी आवश्यक था। इसलिए उन्होंने सीता की सोने की प्रतिमा बनवाई है। वही उनके बाईं ओर विराजती है।"

आत्रेयी ने आगे कहा, "अभी यज्ञ प्रारम्भ ही हुआ था कि अयोध्या में एक अनहोनी बात हो गई। एक ब्राह्मण का वालक बचपन में ही मर गया और उसका पिता उसके मृतक शरीर को राजद्वार पर डाल गया। इस घटना से अयोध्या में हाहाकार मच गया। महाराज बहुत दुखी हुए। लेकिन इसी समय आकाशवाणी हुई।" वनदेवी ने उत्सुकता से पूछा, "आकाशवाणी ने क्या कहा ?" आत्रेयी बोली, "आकाशवाणी ने कहा कि शम्बूक नाम का वृषल पृथिवी पर तपस्या कर रहा है। उसे ऐसा करने का अधिकार नहीं है, क्योंकि यह

वर्णाश्रम-धर्म के विरुद्ध है। इसलिए आप उसका वध करें। ब्राह्मण का बेटा फिर जी उठेगा। महाराज राम उसीकी तलाश में घूम रहे हैं।" यह सुनकर वनदेवी को आशा हुई कि शायद राम इधर भी आवें।

भाग्य की बात, आत्रेयी जिस समय वनदेवी को कथा सुना रही थी उसी समय राम सचमुच विमान पर चढ़े हुए वन के उसी भाग में जा पहुंचे, जहां शूद्र मुनि शम्बूक घोर तपस्या कर रहा था। उन्होंने उसे देखा तो अपनी इच्छा के विरुद्ध उसका सिर काट लिया। इसी समय एक दिव्यपुरुष प्रकट हुआ और उसने ब्राह्मण-पुत्र को जीवनदान दिया। राम प्रसन्न हुए और उसे देवलोक जाने की आज्ञा दी। तपस्या के कारण वह इसका अधिकारी बन चुका था। वह दिव्य पुरुष शम्बूक ही था। उसीसे महाराज राम को मालूम हुआ कि वह उस समय दंडकवन में पंचवटी के निकट ही हैं।

: ४ :

पंचवटी का नाम सुनते ही उन्हें सीता के साथ इस वन में रहने की बात याद हो आई। विरह का शोक हरा हो उठा और वह सीता-हरण की याद करके दुःख की आग में जलने लगे। शम्बूक ने वन के मनोहर दृश्य दिखाकर उन्हें शांत करना चाहा, पर सफल नहीं हुआ।

राम ने उसे विदा किया, पर देवलोक जाने से पहले वह अगस्त्य ऋषि से मिलने गया और लौटकर उसने महाराज राम से कहा, "अगस्त्य मुनि अपने आश्रम पर आपके आने की राह देख रहे हैं। कृपया वहां चलकर उनकी अभिलाषा पूरी कीजिए।"

राम अगस्त्य मुनि की आज्ञा कैसे टाल सकते थे? वह उधर ही चल पड़े।

उनके आने का समाचार सबको मालूम हो चुका था। सब लोग चिन्तित थे। इसी चिंता में तमसा और मुरला नाम की दो नदियां स्त्रियों के रूप में जाती हुईं अचानक राह में एक-दूसरे से मिल गईं। तमसा के पूछने पर मुरला ने कहा, "अगस्त्य मुनि की धर्मपत्नी लोपामुद्रा ने मुझे गोदावरी से यह कहने के लिए भेजा है कि महाराज राम इस वन में फिर आने वाले हैं। वनवास-काल में यहां उन्होंने सीता के साथ विहार किया था। उसी सीता का अब उन्होंने परित्याग कर दिया है। उसकी याद करके वह बहुत दुखी होंगे। हो सकता है कि वह मूर्च्छित भी हो जायं। उस समय तुम्हारा यह कर्त्तव्य होगा कि जैसे बने वैसे महाराज के प्राणों की रक्षा करना।"

यह सुनकर तमसा बोली, "इसके लिए इतनी चिन्ता करना व्यर्थ है, क्योंकि चेतना दिलाने के लिए

सीता पास ही हैं। जबसे लक्ष्मण उन्हें वाल्मीकि के आश्रम में छोड़ गए थे तब से वह यहीं रह रही हैं। दारुण प्रसव वेदना से पीड़ित होकर वह भागीरथी की धारा में कूद पड़ी थीं। वहीं उनके दो पुत्र उत्पन्न हुए, जिनको पृथिवी और भागीरथी अपने साथ ले आईं। जब वे बालक कुछ बड़े हुए तो भागीरथी ने स्वयं उन्हें वाल्मीकि मुनि को सौंप दिया। इधर जब उन्हें सरयू के द्वारा यह मालूम हुआ कि राम फिर यहीं आ रहे हैं तब वह विशेष रूप से चिन्तित हुईं, क्योंकि वह जानती थीं कि यहां आते ही राम जानकी की याद करके बहुत दुखी होंगे। यह सोचकर वह सीता के साथ महाराज राम को धीरज बंधाने के लिए चल पड़ी हैं। सीता से उन्होंने राम की चर्चा नहीं की, बल्कि लव-कुश की बारहवीं वर्षगांठ पर सूर्य की पूजा करने के बहाने वह उन्हें ले गई हैं। मुझे भी साथ रहने की आज्ञा हुई है। उनके प्रसाद से सीता को कोई देख न सकेगा।"

कह सुनकर मुरला वहीं से लौट आई।

इसी समय राम पंचवटी में आ पहुंचे। जब उन्होंने वनवास-काल के पूर्व परिचित स्थानों को देखा तो सीता की याद ताजा हो आई। वह बहुत दुखी हो उठे। एक-एक बात उनके दिल में कसकने लगी। वह बार-बार सीता को पुकारने लगे।

वहीं एक ओर सीता फूल चुन रही थीं। तमसा भी वहीं आ पहुंची। राम को देखकर वह बहुत दुखी हुईं और मूर्च्छित हो गईं। उधर सीता को पुकारते-पुकारते राम भी मूर्च्छित हो गये। तब सीता की चेतना लौटी और राम को इस हालत में देखकर वह विलाप करने लगीं। लेकिन तमसा के कहने पर उन्होंने राम का स्पर्श किया। राम उस स्पर्श को पहचानते थे। वह समझ गए कि सीता कहीं पास ही हैं। फिर तो वह सीता को ढूंढ़ते हुए और भी करुण विलाप करने लगे। इसी समय वनदेवी वासन्ती राम के पास आई। उसने उनका मन बहलाने के बहुत प्रयत्न किए, परन्तु राम का शोक कम न हुआ। वह कभी उस कदम्ब वृक्ष को देखते जिसे सीता ने सींचा था, कभी उस शिला को छूते जिसपर वह सोया करते थे। जिन हिरनों को सीता घास खिलाती थीं वे अब भी वहां आते थे। यह सब देख राम रोने लगे। उधर सीता भी यह सब देख-सुन रही थीं। वह भी बहुत दुखी थीं। लेकिन प्रकट कैसे हो सकती थीं। एक बार जब राम फिर मूर्च्छित हो गए तो सीता ने पहले की तरह उनका स्पर्श किया। इसपर उन्होंने सीता का हाथ पकड़ लिया और उसकी शीतलता का अनुभव करने लगे। लेकिन सीता ने हाथ छुड़ा लिया। राम व्याकुल हो उठे। तब वासन्ती ने उन्हें फिर समझाया। इसी तरह

बातें करते हुए अश्वमेध-यज्ञ की चर्चा चल पड़ी। और जब राम ने बताया कि अश्वमेध के लिए उनकी सहधर्मिणी सीता की जगह स्वर्ण की प्रतिमा है तो सीता रो पड़ीं। गद्गद् कंठ से बोलीं, "आप सचमुच मेरे स्वामी हैं। मेरे परित्याग की लज्जा का कांटा आपने निकाल दिया है। मैं धन्य हूँ, जो स्वामी का इतना मान पातीं हूँ!"

थोड़ी देर में राम को अयोध्या का स्मरण हो आया और राजकाज देखने के लिए वह तुरन्त लौटने को विवश हो गए। तब हृदय में सीता के विरह का दर्द छिपाकर वह अयोध्या लौट पड़े। छाया सीता भी राम के चरण-कमलों में प्रणाम कर तमसा के साथ लौट गई।

: ५ :

इधर एक दिन संयोगवश राजर्षि जनक तथा महर्षि वशिष्ठ, देवी अरुन्धती और महारानी कौशल्या आदि अनेक अतिथि वाल्मीकि के आश्रम पर इकट्ठे हुए। इसलिए वहां बड़ी चहल-पहल होने लगी। यह जानकर कि राजर्षि जनक यहीं हैं महर्षि वशिष्ठ ने अपनी पत्नी देवी अरुन्धती को राम की माता के पास भेजा कि वह स्वयं जाकर राजा जनक से मिलें। गुरु की आज्ञा पाकर अरुन्धती के साथ देवी कौशल्या वहां पहुंचीं, जहां राजर्षि एक वट वृक्ष के नीचे बैठे हुए सीता की चिन्ता कर रहे थे। वह बहुत दुखी थे। उनका दुःख इसलिए और भी

बढ़ गया था कि लज्जा के कारण वह इच्छानुसार रो भी नहीं सकते थे।

देवी कौशल्या को अपने सामने देखकर सहसा उन्हें इस बात का विश्वास नहीं आया कि यह वही कोशल-नरेश की पटरानी और उनकी सखी कौशल्या हैं। सीता-वनवास के दारुण दुःख के कारण वह बिलकुल बदल गई थीं। उधर राजर्षि के सामने पहुंचते ही देवी कौशल्या के हृदय में भी दुःख उमड़ आया। स्वर्गवासी स्वामी, विरह में जलते हुए पुत्र और वनवासी पुत्रवधू, एक साथ सबकी याद हो आई। प्रणाम आदि के बाद राजर्षि जनक ने उलहना देते हुए कंचुकी से कुशल पूछी। उसने उत्तर दिया कि चूंकि छोटे दिलवाले प्रजा के लोग अग्नि-शुद्धि को स्वीकार नहीं करते थे, इसलिए राम को विवश होकर सीता को वन में भेजना पड़ा। यह सुनकर वह क्रोध से भर उठे। कहने लगे, "हमारी संतान को शुद्ध करनेवाली अग्नि कौन होती है। यह राम की ही नहीं, हमारी भी अप्रतिष्ठा है।"

यह सुनकर कौशल्या घबरा उठीं और बेसुध होकर गिर पड़ीं। उन्हें इस प्रकार बेहोश देखकर राजा जनक लज्जित और व्याकुल हो उठे और जल्दी-जल्दी अपने कमंडल से जल लेकर उनपर छिड़कने लगे। साथ ही उन दिनों की याद करने लगे, जब वह अपने प्रिय मित्र

दशरथ और सखी कौशल्या में झगड़ा हो जानेपर मध्यस्थ बना करते थे। परिचर्या करनेपर जब राजमाता की चेतना लौटी तो वह फिर जानकी के प्रति अपने पति के स्नेह को याद कर रोने लगीं।

इसी समय वहां बड़ा कोलाहल मचने लगा। उस दिन पाठशाला में छुट्टी थी। कुछ बालक खेलते-खेलते उधर आ निकले। सहसा कौशल्या की दृष्टि एक बालक पर जा पड़ी। उसे देखकर उनके हृदय में स्नेह उमड़ने लगा। उसकी सूरत राम और सीता से मिलती थी। वेश-भूषा से भी वह क्षत्रिय बालक जान पड़ता था। राजर्षि को भी ऐसा ही लगा। उन्होंने कंचुकी को भेजकर उस बालक को अपने पास बुलाया। आते ही उसने सबसे पहले हाथ जोड़कर सब गुरुजनों को प्रणाम किया। उसके शिष्टतापूर्ण आचरण और विनम्रता का कौशल्या के मन पर बड़ा प्रभाव पड़ा। उनके हृदय में पुत्र-स्नेह उमड़ने लगा क्योंकि वह बालक रूप से नहीं, स्वर से भी राम के समान जान पड़ता था। महारानी ने उससे उसके माता-पिता का नाम पूछा। पर वह केवल इतना ही बता सका कि वह ऋषि वाल्मीकि का पुत्र है। लव ने उन सबका परिचय पूछा। जनक ने उसे सबका परिचय दिया। बातों-ही-बातों में कुश का नाम आगया। लव ने अपने बड़े भाई का परिचय दिया और रामायण की कथा

का अन्तिम भाग भी सबको सुनाया। सीता के वनवास की बात सुनकर जनक और कौशल्या फिर बेचैन हो उठे।

इतने में आश्रम के दूसरे बालक वहां आगए और लव से बोले, "अरे मित्र, देखो, जिसे नगर के लोग अश्व कहते हैं वही पशु हमारे आश्रम में आ गया है।" यह कहकर वह लव को खींचने लगे। तब गुरुजनों की आज्ञा लेकर वह भी उस पशु को देखने चला गया। देखते ही उसने कहा, "अरे, यह तो अश्वमेध का घोड़ा है। देखो, इसके साथ कितने सिपाही हैं!" इसी समय उन्होंने सैनिकों द्वारा की गई यह घोषणा सुनी कि यह घोड़ा रावण के शत्रु महाराज राम का है और क्षत्रियों को ललकारता हुआ घूम रहा है।

: ६ :

इस घोषणा को सुनकर लव जोश से भर उठा। उसने कहा, "क्या धरती पर कोई क्षत्रिय नहीं है जो ऐसी शेखी की बातें कहते हो?" उधर से उत्तर मिला, "यह महाराज का विरोधी कौन है?" लव बोला, "महाराज होंगे तुम्हारे। लो, मैं तुम्हारी पताका लिये जाता हूँ।" फिर उसने बालकों से कहा, "ढेले मार-मार कर इस घोड़े को उधर भगा दो। वहां वह हिरणों के साथ घास चरेगा।" इसपर क्रोध से भरा हुआ एक सैनिक वहाँ आया और उसे डांटने लगा। बालकों ने भी लव से

लौट चलने को कहा, पर वह उत्तेजित हो उठा था। सैनिकों को शस्त्र चमकाते देखकर उसने भी धनुष-बाण उठा लिया।

युद्ध शुरू हो गया। लव ने बाणों की मार से अश्व-रक्षकों को व्याकुल कर दिया।

इस युद्ध का समाचार पाकर कुमार चन्द्रकेतु बड़े हैरान हुए और शीघ्र ही वहां आ पहुंचे। सुमन्त उनका रथ चला रहे थे। लव के युद्ध-कौशल को देखकर दोनों को ऐसा लगा जैसे वह रघुवंश का कोई अनजान वीर हो। अकेले एक उसीने सारी सेना को बाणवर्षा से तंग कर रखा था। यह देखकर कुमार चन्द्रकेतु लज्जित हो उठे। सुमन्त ने कहा, "वत्स, हमारी सेना मिलकर भी इसका बाल बांका नहीं कर सकती।"

लेकिन राघवी सेना का इस प्रकार विकट संहार देखकर कुमार चन्द्रकेतु चुप न रह सके। वह आगे बढ़े और उन्होंने सुमन्त से पूछा, "दूतों ने इस वीर का क्या नाम बताया है ?"

सुमन्त बोले, "लव।" इसपर चन्द्रकेतु ने लव को ललकारा, "हे लव, इन साधारण सैनिकों को हराने से तुम्हारा यश नहीं बढ़ेगा। तुम मेरे साथ आकर युद्ध करो।" लव चुनौती को स्वीकार करके कुमार के सामने आ पहुंचा। पर तभी राघवी सेना के हारे हुए वीरों ने उसे फिर चारों

ओर से घेर लिया और विजय की खुशी में सिंहनाद करने लगे। सैनिकों का यह अनुचित काम चन्द्रकेतु से न देखा गया और वह कड़ककर अपनी सेना के वीरों को धिक्कारने लगा। इसी बीच लव ने जृम्भकास्त्र का प्रयोग करके सारी सेना को मोहित कर लिया। यह देखकर चन्द्रकेतु और सुमन्त चकित हो उठे और जब लव सामने आया तो उसे देखकर दोनों के मन में अनुराग जाग उठा। सुमन्त के नेत्र भर आए और उन्हें शंका होने लगी कि कहीं यह सीता का पुत्र तो नहीं है। फिर लव को पैदल देखकर चन्द्रकेतु रथ से उतरने लगा। लव ने कहा, "युद्ध करना है तो आप रथ पर बैठे रहिए। हम वनवासी लोगों को उसपर चढ़ने का अधिकार नहीं है।"

बातों-ही-बातों में महाराज राम का नाम आगया। लव ने कहा, "सुना है कि वह राजर्षि सुजन हैं। हम उनके यज्ञ में विघ्न नहीं डालना चाहते; पर सैनिकों ने क्षत्रियों की निन्दा करके हमें उत्तेजित कर दिया। क्या क्षत्रियों का सारा शौर्य एक ही व्यक्ति में इकट्ठा हो गया है?" सुमन्त बोले, "तुम राम को नहीं जानते। जिनके सामने परशुराम ने घुटने टेक दिये थे उन राम के लिए ऐसा कहना उचित नहीं।" जब उन दोनों से राम के लोकोत्तर शौर्य की और भी प्रशंसा सुनी तो लव बोला, "अजी, रघुनाथजी के चरित्र को कौन नहीं जानता। वह गुरुजन

हैं। सुन्दपत्नी ताड़िका का वध करके उन्होंने अपार यश पाया है। सुना है, खरदूषण से युद्ध करते समय वह तीन पग पीछे हट गए। बालिवध में उन्होंने जिस छल का सहारा लिया था उसको भी सब जानते हैं। और हां, रही परशुराम पर विजय पाने की बात, वह भी लोगों से छिपी नहीं है।"

इन शब्दों में जो कटु व्यंग्य था उससे चन्द्रकेतु तिलमिला उठा। भगवान राम के ऐसे वीरतापूर्ण कामों की निन्दा उससे न सही गई। वह क्रोध में भरकर चिल्ला उठा, "तुमने तात की निन्दा करके मर्यादा को भंग किया है। तुम वाचाल हो।" लव बोला, "मुझे आंखें क्या दिखाते हो ? युद्ध करना है तो आ जाओ।"

इसपर वे दोनों वीर युद्ध-स्थान की ओर चल पड़े। सुमन्त समझ गए कि अब ये दोनों वीर भयंकर युद्ध करेंगे। सचमुच उन्होंने जो युद्ध किया वह भयंकर ही था। उस समय विमान पर सवार एक विद्याधर और एक विद्याधरी आकाश-मार्ग से जा रहे थे। सहसा गगन-मंडल को दिव्यास्त्रों के प्रहार से पीतवर्ण होते देखकर विद्याधरी भयभीत हो उठी। तब विद्याधर ने बताया कि यह राजकुमार चन्द्रकेतु ने आग्नेयअस्त्र छोड़ा है। लो, अब लव वरुणास्त्र चला रहा है, जिससे अग्नि शान्त हो जायगी।

: ७ :

लव और चन्द्रकेतु में इस प्रकार युद्ध हो ही रहा था कि शम्बूक का वध करके महाराज राम उधर आ निकले। उन्होंने दूर से ही संकेत तथा मधुर वचनों द्वारा वह युद्ध रुकवा दिया। महावीर राम को देखकर चन्द्रकेतु ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और फिर आदर से लव का परिचय दिया। उस बाल ब्रह्मचारी के रूप को देखकर राम चकित रह गए। लव भी चन्द्रकेतु से महाराज राम का परिचय पाकर बहुत प्रसन्न हुआ और उसने उन्हें बड़े आदर और अनुराग से प्रणाम किया। राम ने स्नेह से भरकर उसे गले लगा लिया। राम के ऐसे व्यवहार को देखकर लव बहुत शरमाया और अपनी चपलता के लिए क्षमा मांगने लगा। पर राम उसके पराक्रम से परम प्रसन्न हुए। उन्होंने जब जृम्भकास्त्र की बात सुनी तो लव की ओर मुड़कर कहने लगे, "वत्स, पहले अपना अस्त्र निवारण तो करलो।" लव ने थोड़ी देर तक ध्यान धारण किया और अस्त्र का निवारण किया। यह देखकर रामचंद्र को बड़ा कौतूहल हुआ। उन्होंने लव से पूछा, "ये दिव्यास्त्र तुमने कहां से पाए?"

लव बोले, "हमें आपसे आप ही ये अस्त्र सिद्ध हुए हैं।" राम पूछने लगे, "तुम अपनेको हमें क्यों कहते हो?"

लव बोला, "हम दो भाई हैं।"

राम ने पूछा, "तुम्हारा दूसरा भाई कहां है ?"

इसी समय कुश भरत मुनि के आश्रम से लौटकर वहां आ पहुंचा और लव से उसने युद्ध का कारण पूछा। लव ने कहा, "युद्ध की बात छोड़िये, भैया । पहले लो, महाराज राम से मिलो । यह हमसे स्नेह करते हैं और आपसे मिलने को व्याकुल हैं ।"

कुश बोला, "क्या ये वही राम हैं, जो रामायण की कथा के नायक और वेदों के रक्षक हैं ?"

लव के 'हां' कहने पर कुश ने राम को प्रणाम किया। राम ने कुश को गले लगा लिया। उन्हें लगा जैसे यह बालक उन्हींका पुत्र है। उन्होंने उन दोनों बालकों को फिर ध्यान से देखा। उन्हें अनुभव हुआ कि उनमें स्वयं उनकी और सीता की छवि दीखती है। फिर उन्हें जृम्भकास्त्र की याद आई। सीता को चित्र दिखाते समय राम ने कहा था कि तुम्हारे पुत्रों को ये अस्त्र सिद्ध होंगे।

वे इन्हीं विचारों में मग्न हो रहे थे और सीता का स्मरण हो आने से उनके सुन्दर मुख पर उदासी छा गई थी। आंखें डबडबा आई थीं। इसपर लव ने पूछा, "महाराज की ऐसी दशा क्यों हो गई है ?"

कुश ने उत्तर दिया, "देवी सीता के बिना रघुनाथ को शोक-ही-शोक दिखाई देता है। क्या तुमने रामायण नहीं पढ़ी जो अनजान की तरह पूछ रहे हो ?"

महाराज राम सबकुछ सुन रहे थे। रामायण का नाम सुनकर बोले, "इस रचना के कुछ अंश हमें भी सुनाओ।" उनका अनुरोध मानकर कुश ने कई श्लोक पढ़े, जिन्हें सुनकर राम का शोक सीता की याद करके और भी बढ़ गया।

इतने में रामचन्द्र को गुरु वशिष्ठ, वाल्मीकि, कौशल्या, जनक और अरुन्धती के आने का समाचार मिला और यह भी पता लगा कि सहसा रघुनाथ को इस प्रकार मलिन देखकर राजा जनक मूर्च्छित हो गए थे और जब उन्हें होश आया तो माताजी को मूर्च्छा आ गई। यह सुनकर राम बड़े दुखी हुए और ऋषि वाल्मीकि की पर्णशाला की ओर चल दिये। राजा जनक के सामने जाने में उन्हें बड़ी लज्जा आ रही थी। साथ-ही-साथ मन अपार शोक से व्याकुल हो रहा था। मार्ग दिखाते हुए कुश और लव उनके आगे-आगे चल रहे थे।

: ८ :

इन्हीं दिनों एक बार महर्षि वाल्मीकि ने अप्सराओं द्वारा एक नाटक के खेले जाने का प्रबन्ध किया। उसे देखने के लिए अपनी तपस्या के प्रभाव से उन्होंने सारी सृष्टि को गंगा के किनारे बुला भेजा। ठीक समय पर नाटक प्रारम्भ हुआ और एक ओर से सीता की करुण ध्वनि सुनाई दी। सूत्रधार ने नाटक का परिचय देकर

उपस्थित दर्शकों से निवेदन किया कि पृथ्वी-कन्या सीता दारुण प्रसव वेदना से अधीर हो रही है और गंगा की धारा में कूदकर अपने प्राण दिये दे रही है। यह सुन रामचन्द्र खड़े होगए और उन्हें रोककर कहने लगे, "हे जनकनन्दिनी, ऐसा अनर्थ न करो।"

वास्तव में भगवान रामचन्द्र उस अभिनय को देखने में इतने दत्तचित्त होगए थे कि काल्पनिक घटना को भी वह प्रत्यक्ष सत्य मान बैठे थे। बात यह थी कि सीता की स्मृति उनके हृदय में ऐसी घर कर गई थी कि वह सदा उनकी मूर्ति को देखा करते थे। इसीलिए वह काल्पनिक आपत्ति के अनुमान से विचलित हो उठे। तब लक्ष्मण उन्हें समझाने लगे कि महाराज, आपको यह क्या हो गया है ? यह तो अभिनय है। इससे आप इतने विचलित क्यों हो रहे हैं ?

इसी समय रंगमंच पर गंगा और वसुन्धरा अपनी गोद में एक-एक नवजात शिशु को लेकर प्रकट हुईं। कुछ देर तक वे सीता-परित्याग के बारे में बातचीत करती रहीं। वसुन्धरा अपनी बेटी की यह दशा देखकर बड़ी दुखी हुई। वह राम पर भी कुपित हुई। पर देवी गंगा के समझाने पर शान्त हो गई। जब सीता ने अपने दुर्भाग्य की कहानी कहनी शुरू की तो दोनों ने उसे सान्त्वना दी और उसे विश्वास दिलाया कि उसका कल्याण ही

होगा । इसी समय जृम्भकास्त्र रंगमंच पर आए। बोले, "सीतादेवी, हम तुमको नमस्कार करते हैं । जैसाकि रघुनाथ ने कहा था हम तुम्हारे पुत्रों के आश्रित हैं ।" इसी समय भागीरथी ने भी सीता से कहा कि महर्षि वाल्मीकि उनका जातकर्म करेंगे । यह सुनकर लक्ष्मण राम से बोले, "हो-न-हो, वे कुमार लव-कुश ही हैं ।"

राम बोले, "इसी कारण मेरा हृदय प्रसन्न है ।"

इतने में गंगा और वसुन्धरा के साथ सीता रसातल को चली गईं । राम "हाय प्रिये, तू पृथ्वी में समा गई" कहकर बेसुध होगए। महर्षि वाल्मीकि ने सब बाजे-गाजे बन्द करने की आज्ञा दी । फिर थोड़ी देर में रंगमंच पर समुद्र-मंथन जैसी हलचल हुई और एक दिव्य सिंहासन जल के ऊपर निकलता हुआ दिखाई देने लगा । इसपर वसुन्धरा, जानकी और गंगा तीनों बैठी हुई थीं। वसुन्धरा ने जानकी को अरुन्धती को सौंप दिया। सीता को साथ लेकर अरुन्धती आगे बढ़ी। राम अभी तक बेसुध पड़े थे, लेकिन जब अरुन्धती की आज्ञा से जानकी ने अपने कर-कमलों से उनको छुआ तो वह स्वस्थ हो गए। उन्होंने देखा कि सब गुरुजन प्रसन्न हो रहे हैं । उन्हें भी बड़ा हर्ष हुआ । तभी वसुन्धरा और भागीरथी ने राम को याद दिलाया कि उन्होंने स्वयं उन दोनों से जानकी की रक्षा करने की प्रार्थना की थी । उन्होंने अपना वचन पूरा कर

लिया। राम ने कृतज्ञभाव से दोनों को प्रणाम किया। फिर देवी अरुन्धती ने उपस्थित जनता से सीता को स्वीकार करने के बारे में परामर्श मांगा। सबने एक स्वर से उनका अनुमोदन किया और सीता को प्रणाम किया। तब देवी अरुन्धती बोली, "राम, सीता तुम्हारी सहर्धमिणी है। यज्ञ में स्वर्ण प्रतिमा को हटाकर अब तुम धर्मानुसार इनको स्थान दो।"

राम ने सिर झुकाकर बड़े हर्ष से इस आदेश को स्वीकार किया। फिर तो चारों ओर हर्ष उमड़ पड़ा। सब आपस में मिलने लगे। वाल्मीकि लव-कुश को ले आए और बोले, "कुमार कुश और लव! यह रघुपति तुम्हारे पिता हैं, लक्ष्मण तुम्हारे चाचा हैं, सीता तुम्हारी माता हैं और यह राजर्षि जनक तुम्हारे नाना हैं।" कुमारों ने सबका अभिनन्दन किया। देवी सीता पिता जनक को देखकर हर्ष और करुणा से उमड़ उठीं और पुत्रों को छाती से लगाकर रोने लगीं। स्वस्थ होने पर उन्होंने गुरुजनों के चरण छुए। ठीक उसी समय लवणासुर का वध करके शत्रुघ्न भी वहां आ पहुंचे। उन लोगों का हर्ष और भी बढ़ गया।

'मंडल' के प्रकाशन एक दृष्टि में

पुस्तक	लेखक	मूल्य
आत्मकथा	(गांधीजी)	५)
प्रार्थना-प्रवचन २ भाग	,,	५॥)
गीता-माता	,,	४)
पंद्रह अगस्त के बाद		१॥), २)
द० अफ्रीका का सत्याग्रह		३॥)
मेरे समकालीन	,,	५)
आत्म-संयम	,,	३)
गीता-बोध	,,	॥)
अनासक्तियोग	,,	१॥)
ग्राम-सेवा	,,	।=)
मंगल-प्रभात	,,	।=)
सर्वोदय	,,	।=)
नीति-धर्म	,,	।=)
आश्रमवासियों से	,,	।=)
हमारी मांग	,,	१)
सत्यवीर की कथा	,,	।)
संक्षिप्त आत्मकथा	,,	१) १॥)
हिन्द-स्वराज्य	,,	॥।)
अनीति की राह पर	,,	१)
बापू की सीख	,,	॥)
गांधी-शिक्षा (तीन भाग)		१=)
आज का विचार (दो भाग)		॥।)
ब्रह्मचर्य (दो भाग)	,,	१॥।)
गांधीजी ने कहा था ३ भाग		॥।)
शान्ति यात्रा	(विनोबा)	१॥)
विनोबा के विचार : २ भाग		३)
गीता-प्रवचन	,,	१), १॥)
जीवन और शिक्षण	,,	२)
स्थितप्रज्ञ-दर्शन	,,	१)
ईशावास्यवृत्ति	,,	॥।)
ईशावास्योपनिषद्	,,	=)
सर्वोदय-विचार	,,	१=)
स्वराज्य-शास्त्र	,,	॥)
गांधीजी को श्रद्धांजलि	,,	।=)
भूदान-यज्ञ	(विनोबा)	।)
राजघाट की संनिधि में	,,	॥)
विचार-पोथी	,,	१)
सर्वोदय का घोषणा-पत्र	,,	।)
जमाने की मांग	,,	=)
उपनिषदों का अध्ययन	,,	१)
मेरी कहानी	(नेहरू)	८)
,, संक्षिप्त	,,	२॥)
हिन्दुस्तान की समस्याएँ	,,	२)
लड़खड़ाती दुनिया	,,	२)
राष्ट्रपिता	,,	२)
राजनीति से दूर	,,	२)
हमारी समस्याएं	,,	॥।)
विश्व-इतिहास की झलक		२१)
सं० हिन्दुस्तान की कहानी		५)
नया भारत	,,	।)
आजादी के आठ साल	,,	।)
गांधीजी की देन	(रा० प्र०)	१॥)
गांधी-मार्ग	,,	=)
महाभारत-कथा	(राजाजी)	५)
कुब्जा-सुन्दरी	,,	३)
शिशु-पालन	,,	॥)
मैं भूल नहीं सकता	(काटजू)	२॥)
कारावास-कहानी	(सु. नै.)	१०)
गांधी की कहानी	(लु० फि०)	४)
भारत-विभाजन की कहानी		४)
बापू के चरणों में		२॥)
इंग्लैंड में गांधीजी		२)
बा, बापू और भाई		॥)
गांधी-विचार-दोहन		१॥)
सत्याग्रह-मीमांसा		३॥)
बुद्ध-वाणी	(वियोगी हरि)	१)
सन्त-सुधासार	,,	११)
श्रद्धाकण	,,	१)
अयोध्याकाण्ड	,,	१)
भागवत-धर्म	(ह० उ०)	५॥)

पुस्तक	मूल्य
श्रेयार्थी जमनालालजी,,	६॥)
स्वतन्त्रता की ओर ,,	४)
बापू के आश्रम में ,,	१)
मानवता के झरने (माव०)	१॥)
बापू (घ० बिड़ला)	२)
रूप और स्वरूप ,,	॥=)
डायरी के पन्ने ,,	१)
ध्रुवोपाख्यान ,,	।)
स्त्री और पुरुष (टालस्टाय)	१)
मेरी मुक्ति की कहानी,,	१॥)
प्रेम में भगवान ,,	२)
जीवन-साधना ,,	१।)
कलवार की करतूत ,,	।)
हमारे जमाने की गुलामी,,	।॥)
बुराई कैसे मिटे ? ,,	१)
बालकों का विवेक ,,	॥)
हम करें क्या ? ,,	३॥)
धर्म और सदाचार ,,	१।)
अंधेरे में उजाला ,,	१॥)
ईसा की सिखावन ,,	१)
कल्पवृक्ष (वा० अग्रवाल)	२)
लोक-जीवन (कालेलकर)	३॥)
साहित्य और जीवन	२)
कब्ज (म० प्र० पोद्दार)	१)
हिमालय की गोद में,,	२)
कहावतों की कहानियाँ,,	२)
राजनीति-प्रवेशिका	१)
जीवन संदेश (ख० जिब्रान)	१।)
अशोक के फूल	३)
जीवन-प्रभात	५)
कां० का इतिहास २ भाग	२०)
पंचदशी	२)
सप्तदशी	१॥)
रीढ़ की हड्डी	१॥)
अमिट रेखाएँ	३)
नवप्रभात (नाटक)	१)
कृषि-ज्ञान-कोष	४)
प्रकाश की बात	१॥)
धरती और आकाश	१।)
मेरी जीवन-यात्रा	२)
एक आदर्श महिला	१)
राष्ट्रीय-गीत	।)
तामिल-वेद (तिरुवल्लवर)	१॥)
थेरी-गाथाएँ	१॥)
बुद्ध और बौद्ध साधक	१॥)
जातक-कथा (आनंद कौ०)	२॥)
हमारे गांव की कहानी	१॥)
खादी द्वारा ग्राम-विकास	।॥)
साग-भाजी की खेती	३)
ग्राम-सुधार	१।)
पशुओं का इलाज	॥)
चारादाना	।)
रामतीर्थ-संदेश (३ भाग)	१=)
रोटी का सवाल (क्रोपा०)	३)
नवयुवकों से दो बातें ,,	।=)
पुरुषार्थ (डा० भगवानदास)	६)
काश्मीर पर हमला	२)
शिष्टाचार	॥)
तट के बन्धन	२)
भारतीय संस्कृति	३॥)
आधुनिक भारत	५)
फलों की खेती	२॥)
मैं तन्दुरुस्त हूँ या बीमार	॥)
नवजागरण का इतिहास	३)
गांधीजी की छत्रछाया में १॥)	२॥)
भागवत-कथा	३॥)
जय अमरनाथ	१॥)
हमारी लोककथाए	१॥)
पुण्य की जड़ हरी (व्रज-लोक कथाएं)	१॥)
संस्कृत-साहित्य-सौरभ (२६ पुस्तकें) प्रत्येक	।=)
समाज-विकास-माला (५६ पुस्तकें) प्रत्येक	।=)

'संस्कृत-साहित्य-सौरभ' की पुस्तकें

मूल्य प्रत्येक का छः आना

२

छः आना